इकाई 5 राजनैतिक अर्थव्यवस्था*

संरचना

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 'राजनीति' और 'अर्थशास्त्र' शब्द की समझ

5.3 राजनैतिक अर्थव्यवस्था का ऐतिहासिक विवरण

5.4 राजनैतिक अर्थव्यवस्था की अवधारणा

5.5 राजनैतिक अर्थव्यवस्था के तत्व

- 5.5.1 उत्पादन
  - 5.5.1.1 श्रम
  - 5.5.1.2 पूंजी
- 5.5.2 वितरण
  - 5.5.2.1 किराया/भाड़ा
  - 5.5.2.2 वेतन
  - 5.5.2.3 लाभ
- 5.5.3 विनिमय
- 5.5.4 खपत

5.6 नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था

- 5.6.1 नव–मार्क्सवादी विचारधारा
- 5.6.2 नव–वेबर विचारधारा

5.7 सारांश

5.8 संदर्भ

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप पढ़ेंगे–

- राजनीति तथा अर्थशास्त्र दोनों शब्दों का अर्थ तथा दोनों में संबंध;
- राजनैतिक अर्थव्यवस्था की सामान्य अवधारणाओं की रूपरेखा;
- राजनैतिक अर्थव्यवस्था के तत्वों का वर्णन;
- नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था की प्रकृति को समझना।

*डॉ. ऐजाज अहमद गिलानी, कश्मीर विश्वविद्यालय, कश्मीर

5.1 प्रस्तावना

सामान्यतः राजनैतिक अर्थव्यवस्था का मतलब है – शक्तियों का वितरण। यह नीति निर्माण तथा राजनीति में पूंजी की भूमिका पर प्रकाश डालती है। नगरीय क्षेत्रों में इसका मुख्य केन्द्र स्थानीय सरकारों तथा पूंजी के अंतर्संबंधों पर होता है, जहां वित्तीय संपदा तथा स्थावर संपदा दोनों पूंजी के अंतर्गत आते हैं। स्थानीय सरकार तथा पूंजी के बीच संबंध एक निश्चित स्थानीय क्षेत्र में स्थापित नहीं हो पाता है, बल्कि इसकी स्थापना नगरों, राज्यों तथा राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पूंजी की गतिविधियों पर आधारित होती है। इस इकाई में हम राजनैतिक अर्थव्यवस्था की मूलभूत अवधारणा तथा नगरीय क्षेत्रों में राजनैतिक अर्थव्यवस्था की व्याख्या करेंगे।

राजनैतिक अर्थव्यवस्था के विस्तृत ऐतिहासिक वर्णन द्वारा इस इकाई में यह बताने का प्रयास किया जायेगा कि 17वीं शताब्दी में एडम स्मिथ से लेकर 19वीं शताब्दी में कार्ल मार्क्स तक राजनैतिक अर्थव्यवस्था की समझ किस प्रकार विकसित हुई। इस इकाई में राजनैतिक अर्थव्यवस्था की अवधारणात्मक रूपरेखा प्रस्तुत की जायेगी। इसके मूलभूत सिद्धांतों की पहचान द्वारा यह समझने का प्रयास किया जायेगा कि आर्थिक प्रणाली के विश्लेषण के लिए राजनैतिक व्यवस्था का इस्तेमाल किस प्रकार किया जा सकता है। इसके अंतर्गत राजनैतिक अर्थव्यवस्था के चार महत्वपूर्ण तत्वों – उत्पादन, वितरण, विनिमय तथा खपत की व्याख्या की जायेगी तथा दो महत्वपूर्ण विचारधाराओं – नव मार्क्सवादी विचारधारा और नव वेबरियन विचारधारा के माध्यम से नगरीय क्षेत्रों में राजनैतिक अर्थव्यवस्था को समझाने का प्रयास किया जायेगा।

5.2 राजनीति तथा 'अर्थशास्त्र' शब्द की समझ

इससे पहले कि हम राजनैतिक अर्थव्यवस्था की व्यापक अवधारणा पर विचार करें, आइये हम यह जान लें कि इससे संबंधित इन दोनों शब्दों – राजनीति और अर्थव्यवस्था – का मतलब क्या होता है। राजनीति की दो अवधारणायें साहित्य में मौजूद रहती हैं तथा ये दोनों अवधारणायें एक दूसरे की विरोधी भी हैं। इससे राजनीति की परिभाषा करने में बड़ी कठिनाई उत्पन्न हो जाती है। ये दोनों अवधारणा व्यापक है तथा संकीर्ण है। संकीर्ण अवधारणा से यह अर्थ निकलता है कि राजनीति में केवल राजनीतिज्ञ ही शामिल होते हैं। राजनैतिक शब्द की इस संकल्पना के सार्थक तर्क देते हैं कि केवल राजनीतिज्ञ और सरकारी तंत्र भी राजनीति के अंतर्गत एक साथ जुड़े होते हैं। इस अर्थ में राजनीति का अर्थ है राज्य द्वारा किया गया कार्य यद्यपि अन्य अनेक लोग भी हैं जो राजनीति की सीमाओं से बाहर रहते हैं क्योंकि निर्णयात्मक फैसले लेने में उनकी भागीदारी नहीं होती। इस अर्थ में राजनीति शब्द की अवधारणा व्यापक हो जाती है। जिसके अनुसार राजनीति दोनों जगह कार्य करती है, राज्य की सीमाओं के अन्दर संस्थानों के दायरे में भी और राज्यों की सीमाओं के बाहर भी। वे लोग जो लोग इस दावे का समर्थन करते हैं उनका विश्वास है कि राजनीति का संबंध केवल सरकारों तक ही नहीं होता, सरकार के बाहर भी राजनीति का क्षेत्र होता है। राजनैतिक शब्द की इन दोनों अवधारणाओं को समझने के बाद ही राजनैतिक सिद्धांतकारों के बीच इस बात को लेकर असहमति की स्थिति बनी हुई है कि राजनीतिकों परिभाषित करने में कौनसी अवधारणा सटीक है।

'राजनीति' शब्द को समझने के बारे में अनेक प्रकार के विचार रहे हैं जो इस बात पर निर्भर करते हैं कि इस शब्द का इस्तेमाल किस संदर्भ में किया गया है। वास्तव में राजनीति की परिभाषा समय–समय पर बदलती रही है, इसलिए इस शब्द की व्याख्याओं का दायरा बहुत व्यापक है और इसलिए यह तय करना मुश्किल हो जाता

है कि किसको राजनैतिक दायरे के अंतर्गत समझा जाए और किसे राजनैतिक दायरे के अंतर्गत न समझा जाए। कुछ भी हो, परन्तु यह बात हो तय है कि राजनीति का दायरा सरकार चलाने तक ही सीमित नहीं माना जा सकता। राजनीति को समाज के उद्देश्यों को प्राप्त करने का उपकरण भी समझा जाता है।

दूसरी ओर अर्थव्यवस्था को उन संस्थानों की एक व्यवस्था के रूप में समझा जा सकता है जो वस्तुओं के उत्पादन में तथा समाज में उनके वितरण में व्यापक भूमिका निभाते हैं। अर्थव्यवस्था के माध्यम से कोई व्यक्ति यह तय कर सकता है कि समाज में संसाधनों का वितरण किस तरीकों से किया जाए। अर्थव्यवस्था वस्तुओं तथा सेवाओं की कीमतों के निर्धारण में सहयोगी होती है तथा इस मामले में भी सहयोग करती है कि उन चीजों का कैसे पता लगाया जाए जिनका व्यापार होना चाहिये और विनिमय होना चाहिए। जो चीजें किसी देश में पैदा नहीं होतीं उन्हें उन चीजों के बदले कैसे प्राप्त किया जाए, जो देश में पैदा होती हैं। वो तरीका जिसके माध्यम से समाज अपनी अर्थव्यवस्था का प्रबंधन करता है उसे मौलिक रूप से राजनीति का विषय माना जाता है। राजनैतिक तथा वैधानिक संस्थान उन तरीकों पर नियंत्रण करते हैं जिनके द्वारा अर्थव्यवस्था को मजबूत किया जा सकता है तथा संसाधनों को समुचित रूप से वितरित किया जा सकता है।

किसी आर्थिक प्रणाली के मूलतः दो प्रकार होते हैं – एक होता है बाजार प्रणाली जिसमें लोग उत्पादन के संसाधनों का स्वामित्व करते हैं और उन पर नियंत्रण रखते हैं, राज्य का इसमें दखल नहीं होता। इस व्यवस्था में उत्पादन की मांग और पूर्ति अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करती है। यदि मांग अधिक बढ़ जाए और उत्पादन कम हो पाये तो वस्तुओं की कीमत बढ़ जाती है और यदि मांग की तुलना में वस्तुओं की पूर्ति अत्यधिक हो जाए तो कीमतें नीचे आ जाती हैं। दूसरा है, नियंत्रण प्रणाली जिसमें आर्थिक प्रणाली का केन्द्रीकरण होता है। इसका अर्थ यह है कि आर्थिक प्रणाली के बारे में फैसले लेने का अधिकार राज्य में निहित होता है। नियंत्रण प्रणाली में उत्पादन के सभी संसाधनों पर राज्य का पूरा आधिपत्य होता है। इस प्रकार राजनीति और अर्थव्यवस्था दोनों शब्दों की अलग–अलग व्याख्या करने का प्रयास इस खण्ड में किया गया, अब अगले खंड में राजनैतिक अर्थव्यवस्था के इतिहास के बारे में बताया जायेगा।

5.3 राजनैतिक अर्थव्यवस्था का ऐतिहासिक विवरण

विभिन्न समाजशास्त्रियों ने राजनैतिक अर्थव्यवस्था को लम्बे समय से विभिन्न रूपों में समझा है। जैसे एडम स्मिथ ने राजनैतिक अर्थव्यवस्था की परिभाषा देते हुए कहा था – ''एक ऐसा विज्ञान जो संपदा के उत्पादन के लिये राष्ट्रीय संसाधनों का प्रबंधन करता है {स्मिथ, 1776 (1981)}। इसी तरह कार्ल मार्क्स का यह विचार है कि – राजनैतिक अर्थव्यवस्था का अर्थ यह है कि उत्पादन के संसाधनों के स्वामी ऐतिहासिक प्रविधियों को किस तरह नियंत्रित करते थे {मार्क्स, 1859 (1993)}।

बीसवीं शताब्दी में राजनैतिक अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में अर्थशास्त्र और राजनीति के बीच अंतर्संबंधों का अध्ययन शामिल माना जाता था, जिसमें आर्थिक दृष्टिकोण तथा समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण दोनों शामिल थे। आर्थिक दृष्टिकोण संस्थानों के विश्लेषण पर जोर देता है। मूलरूप से राजनैतिक अर्थव्यवस्था में राजनीति और अर्थव्यवस्था दोनों का अध्ययन शामिल है – इस अर्थ में कि राजनीति अर्थव्यवस्था को किस तरह प्रभावित करती है। राजनैतिक अर्थव्यवस्था का जन्म एक स्वतंत्र विचारधारा के रूप में 17वीं शताब्दी में उस समय हुआ जब समाज सामन्तवाद के चंगुल से निकल कर पूंजीवाद की ओर बढ़ रहा था। अनेक आर्थिक सिद्धांतकारों ने इसकी व्याख्या की है

जिनमें प्रमुख रूप से एडम स्मिथ और डेविड रिकार्डों का नाम आता है – इन दोनों को राजनैतिक अर्थव्यवस्था का संस्थापक माना जाता है। उनका विश्वास था कि राजनैतिक अर्थव्यवस्था राज्य के अंतर्गत वस्तुओं और अर्थ के वितरण से संबंधित है। परन्तु बाद में राजनैतिक अर्थव्यवस्था के बारे में विचारों में परिवर्तन आया इस आधार पर कि अर्थव्यवस्था का प्रमुख माध्यम उत्पादन होता है तथा वस्तुओं के उत्पादन के साथ ही अन्य चीजों का उत्पादन जो समाज के विकास में सहयोगी साबित हो सकता है, राजनैतिक अर्थव्यवस्था के अंतर्गत माना जाना चाहिए।

राजनैतिक अर्थव्यवस्था की उत्कृष्ट समझ कार्ल मार्क्स द्वारा स्वीकार नहीं की गई थी। कार्ल मार्क्स ने उत्पादन तथा विकास के नियमों के बीच संबंधों के अर्थ में इसकी व्याख्या की थी। कार्ल मार्क्स तथा फ्रैड्रिक एंजिल्स मजदूरों की गरीबी तथा उन भयावह स्थितियों से ज्यादा सरोकार रखते थे जिनमें मजदूरों को रहना पड़ता था। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में दोनों वर्गों के बीच संघर्ष व टकराव की स्थिति बनी रहती थी और उत्पादन पूंजीपति वर्ग के लिए किया जाता था और द्वंद्वात्मक भौतिकवाद व ऐतिहासिक भौतिकवाद का अस्तित्व था। इन अवधारणाओं के माध्यम से वे समाज में दोनों वर्गों के बीच मौजूद असमानता की व्याख्या करने का प्रयास करते थे।

कार्ल मार्क्स {1859 (1993)} का तर्क था कि पूंजीवदी समाज का अस्तित्व स्थायी नहीं है। वर्ग–व्यवस्था तथा दोनों वर्गों के बीच संघर्ष पूंजीवादी समाज में एक खास तरह का परिवर्तन लायेंगे और इससे जो नये प्रकार के समाज की उत्पति होगी उसमें संघर्ष नाम की कोई चीज रहेगी ही नहीं। उस समाज में कोई शोषण नहीं होगा तथा एक वर्ग का दूसरे वर्ग पर आधिपत्य भी नहीं रहेगा।धीरे–धीरे राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र की पृथक शाला के रूप में राजनैतिक अर्थव्यवस्था नामक विचारधारा का अस्तित्व सामने आया। तथा इससे यह प्रश्न भी उठा कि राजनीति किस प्रकार अर्थव्यवस्था को प्रभावित करती है। इस प्रश्न पर बार–बार विचार होता रहा है क्योंकि यह सच है कि किसी देश के आर्थिक परिणाम राजनैतिक शक्तियों द्वारा तय किये जाते हैं। दूसरे शब्दों में कहे तो अर्थशास्त्र का क्षेत्र राजनैतिक शक्तियों को आर्थिक परिणामों के मामले प्रभावी घटक ही नहीं मानता अपितु राजनैतिक शक्तियों को निर्णायक घटक के रूप में भी स्वीकार करता है।

5.4 राजनैतिक अर्थव्यवस्था की अवधारणा

सामान्यतः राजनैतिक अर्थव्यवस्था सामाजिक व राजनैतिक परिदृश्य को समझने के लिए एक विशेष तरीका है तथा इस परिदृश्य में अर्थशास्त्र और राजनीति दोनों के क्षेत्र अलग–अलग नहीं रह जाते। राजनैतिक अर्थव्यवस्था की नीवं में ये चीजे शामिल हैं – अ) अर्थशास्त्र और राजनीति के बीच संबंध, ब) यह विश्वास कि इस संबंध को अनेक प्रकार से समझा जा सकता है। अतः यहाँ यह जान लेना जरूरी हो जाता है कि राजनैतिक अर्थशास्त्र की अवधारणा उन दोनों के बीच संबंधों का संकेत देती है, वहीं यह भी सच है कि राजनैतिक अर्थव्यवस्था के साथ कोई एक अर्थ स्पष्ट रूप से जुड़ा दिखाई नहीं पड़ता है।

राजनैतिक अर्थव्यवस्था हमें अर्थव्यवस्था विश्लेषण के लिए एक प्रारूप प्रदान करती है जो उस पारंपरिक अर्थशास्त्र से ज्यादा व्यापक है जिसके केंद्र में बाजार अनिवार्य रूप से अवस्थित है। बाजार लगभग उन सभी समस्याओं की सुलझा देता है जो अर्थशास्त्रियों के संज्ञान में आती हैं। ये समस्याएं वास्तव में आर्थिक प्रक्रियाएं ही हैं – जैसे उत्पादन के तरीके तथा वस्तुओं के उत्पादन की सीमाएं, इसके अलावा मुद्रा के माध्यम से वसतुओं के आदान–प्रदान की समस्याएं। अर्थात् उत्पादित वस्तुओं का बाजार–मूल्य। वितरण की समस्या भी सामने आती है जिसके माध्यम से राष्ट्रीय

अर्थव्यवस्था पर दावे सुनिश्चित किये जा सकते हैं तथा राष्ट्रीय आय की दर तथा पद्धति को समझा जा सकता है।

गतिविधि

विभिन्न व्यवसायों, वर्गों तथा स्तरों के कम से कम पांच व्यक्तियों का अपने निकटवर्ती क्षेत्र में रहने वाले लोगों के बीच जाकर साक्षात्कार करिए। उनसे पूछिए कि भारत की राजनीति तथा अर्थव्यवस्था के बारे में उनके क्या विचार हैं। क्या राजनीति और अर्थव्यवस्था एक दूसरे से संबंद्ध हैं या अलग–अलग हैं। हर व्यक्ति द्वारा दी गई जानकारियां में से दो को चुनिए और उन सभी जानकारियों के आधार पर एक पृष्ठ का एक निबंध लिखिए जिसका शीर्षक 'राजनैतिक अर्थव्यवस्था तथा इसका भारत में महत्व' होना चाहिए। अपने अध्ययन केंद्र में इस निबंध पर अपने साथियों के साथ चर्चा कीजिए।

राजनैतिक अर्थव्यवस्था इन चारों समस्याओं से संबधित है, परन्तु यह एक अलग सोच पर काम करती है जो तीन विभिन्न तरीकों का इस्तेमाल करती है।

पहला तरीका है – वे व्यक्ति जो समाज में उत्कृष्ट कोटि के होते हैं, वे आर्थिक प्रणाली को अनेक तरहों से प्रभावित करते हैं। वे पूंजीपति की भूमिका में हो सकते हैं, कर्मचारी हो सकते है, भूस्वामी या दास/नौकर हो सकते है। इन वर्गों में शक्ति का विवरण होता है जो राज्य की नीतियों को प्रभावित करता है। आर्थिक प्रणाली में यह सामाजिक वर्गों का एक पक्ष ही है जो राजनैतिक अर्थशास्त्र के लिए महत्व रखता है।

दूसरा – बाजार आर्थिक संस्थानों को एक महत्वपूर्ण पहलू होता है। कुछ ऐतिहासिक, राजनैतिक तथा सामाजिक ताकतें ऐसी होती है जो अर्थशास्त्रियों की दृष्टि में बाजारों के लिए महत्वपूर्ण होती हैं। ये ताकतें बाजार की प्रकृति तय करती हैं तथा उनकी कार्यप्रणाली व कार्यों को नियंत्रित करती हैं। तीसरा, राज्य अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण घटक होता है जो सामाजिक वर्गों के बीच रुचियों के वितरण में मध्यस्थ की भूमिका निभाता है। यद्यपि विभिन्न वर्गों के बीच स्वार्थों का टकराव होता है तथा इस टकराव का निपटारा कई बार राज्य द्वारा विभिन्न तरीकों से किया जाता है।

राजनैतिक अर्थव्यवस्था का मुख्य केंद्र राज्य तथा बाजार के बीच अंतर्संबंधों पर देखा जा सकता है। स्पष्टता के लिए आधुनिक राष्ट्र राज्य के राजनैतिक संस्थानों को यह राज्य यह दायित्व सौंपता है। जबकि बाजार उन आर्थिक संस्थानों को यह दायित्व देता है जो लोगों के निजी स्वार्थों व रुचियों से मांग और पूर्ति के नियम द्वारा नियंत्रित होते हैं।

बोध प्रश्न 1

1) 'राजनीति' और 'अर्थव्यवस्था' शब्दों की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) आर्थिक व्यवस्था की दो श्रेणियों के नाम बताइए।

(क) ..... (ख) .....।

.....

.....

.....

.....

.....

3) 'राजनैतिक अर्थव्यवस्था' से आप क्या समझते हैं?

.....
.....
.....
.....
.....

4) राजनैतिक अर्थव्यवस्था को पद्धतिगत दृष्टिकोणों के रूप में दो विचारधाराओं में विभाजित किया जा सकता है। उनके नाम बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

5) राजनैतिक अर्थव्यवस्था ..... और ..... के बीच संबंध स्थापित करती है।

.....

.....

.....

.....

.....

5.5 राजनैतिक अर्थव्यवस्था के तत्व

राजनैतिक अर्थव्यवस्था के चार महत्वपूर्ण तत्व होते हैं – पहला तत्व है उत्पादन। उत्पादन में दो घटक शामिल होते हैं – श्रम तथा पूंजी। दूसरा तत्व है – वितरण जिसमें भाड़ा भी शामिल है तथा श्रमिकों का वेतन तथा लाभ भी शामिल है। तीसरा तत्व है विनिमय – लाभ के लिए वस्तुओं का विनिमय। चौथा तत्व है – खपत। इसमें उत्पादक खपत तथा गैर उत्पादक खपत दोनों ही उसमें शामिल हैं।

5.5.1 उत्पादन

उत्पादन में मानव श्रम तथा पूंजी शामिल हैं।

5.5.1.1 श्रम

किसी भी समाज में पूंजी के साथ–साथ उत्पादन के लिए आदमी की मेहनत का भी इस्तेमाल होता हैं। श्रम उत्पादन का एक महत्वपूर्ण घटक है तथा मजदूरों के जीवन यापन के लिए भी यह आवश्यक है कि वे श्रम करे। श्रमिक जब श्रम करता है तो उसमें दो चीजें शामिल होती है – खपत तथा संचालन। श्रमिक को उसके श्रम से अलग नहीं किया जा सकता। लेकिन श्रमिकों के मेहनत करने के तरीकों में बहुत सुधार हुआ है। श्रम विभाजन से श्रमिकों को लाभ हुआ है तथा वे पूंजी के हिस्से भी बन सकते है। एडम स्मिथ {1776 (1981)} ने अपनी पुस्तक 'इन्क्वारी इन टू नेचर एण्ड कॉजेज ऑफ द वैल्थ ऑफ नेशन्स' में श्रम विभाजन के इस पहलू का विस्तार से वर्णन किया। उन्होंने यह तर्क दिया है कि श्रम विभाजन के प्रभाव उत्पादन शक्ति में वृद्धि के रूप में देखें जा सकते हैं। सरल शब्दों में यदि एक मजदूर उत्पादन पद्धति के एक पहलू के रूप में काम करता है तथा दूसरा दूसरे पहलू में मजदूर अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं यदि दूसरे ढंग से काम करें।

5.5.1.2 पूंजी

पूंजी का उद्‌भव अंततः श्रम से होता है। लेकिन उत्पादन की प्रक्रिया हाथों से आरम्भ होती है। इस प्रकार पूंजी का पहला भाग शुद्ध श्रम का अंतिम परिणाम होता है। सामान्यतः पूंजी का मतलब होता है – एक ऐसी चीज जो श्रम द्वारा उत्पन्न की जाती है। इस प्रकार पूंजी स्पष्ट रूप से श्रमिक के श्रम का परिणाम होती है जो अंततः उसकी बचत बन जाती है। यदि बचत न हो तो पूंजी का अस्तित्व संभव ही नहीं है और यदि समस्त उत्पादन की खपत तुरन्त ही जो जाय तो पूंजी बचेगी ही नहीं और आगे और उत्पादन नहीं हो पायेगा। इसका अर्थ यह है कि उत्पादक की खपत तुरन्त ही न की जाय बल्कि उसका कुछ भाग बचाकर रखा जाय। तुरंत खपत न करके बचाया हुआ भाग ही बचत कहलाता है और इसी बचत को आगे उत्पादन के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

इस प्रकार श्रम और पूंजी दोनों उत्पाद के रूप में परिणामस्वरूप सामने आते हैं तथा उत्पादन की पूरी प्रक्रिया या उसका एक भाग एक के स्वामित्व में हो सकता है तथा दूसरा भाग अन्य के। इसका अर्थ यह है कि जब उत्पाद और उत्पादक (श्रम व श्रमिक) दोनों पर पूंजीपति का स्वामित्व होता है तो पूंजीपति ही दोनों भागों का स्वामी बन जाता है। इसका एक सामान्य उदाहरण है वह व्यक्ति जो अपना खेत स्वयं जोतता है, किसी अन्य मजदूर को काम पर नहीं लगाता, तो वह पूंजी और श्रम दोनों का स्वामी बन जाता हैं। परन्तु वही व्यक्ति किसी मजदूर से खेत की जुताई करवाता है तो वह केवल पूंजी का स्वामी होता है।

उत्पादन की यह विधि दो वर्गों को जन्म देती है – (1) पूंजीपति, जो मजदूरों को संसाधन प्रदान करता है। (2) श्रमिक, जो उत्पादन की प्रक्रिया में अपना श्रम लगाते हैं।

5.5.2 वितरण

अभी तक हमने ये समझा कि राजनैतिक अर्थशास्त्र का पहला तत्व उत्पादन है जिसमें दो वर्गों के लोग शामिल होते हैं – पूंजीपति और मजदूर ये दोनों वर्ग उत्पाद का हिस्सा प्राप्त करते हैं – या दो उत्पाद के रूप में या अन्य किसी प्रकार का लाभ जो

इसमें से अर्जित किया जा सकता है। वितरण की समूची प्रक्रिया में किराया/भाड़ा, वेतन और लाभ शामिल होते हैं।

5.5.2.1 किराया/भाड़ा

उपजाऊ और अनुपजाऊ दोनों तरह की भूमि इसमें शामिल होती है। उपजाऊ भूमि वह होती है जो अधिक उत्पादन देती है तथा अनुपजाऊ वह बंजर भूमि होती है जो रेतीली या पथरीली होती है। पहले प्रकार की भूमि में साल में दो फसलें भी ली जा सकती है तथा बंजर भूमि में उत्पादन नहीं हो पाता। उपजाऊ शक्ति के आधार पर जमीन अनेक प्रकार की होती हैं। उपजाऊ भूमि किराया देती है जबकि अनुपजाऊ भूमि किराया नहीं दे पाती, यदि उपजाऊ बना दिया जाय तब ही यह उत्पादन के रूप में किराया दे सकती है यदि किसी तरह इससे उत्पादन लेने का प्रयास किया जाये तो यह किराए का छोटा सा भाग प्रदान कर सकती है।

5.5.2 वेतन

वितरण प्रक्रिया में वेतन दूसरा उप तत्व होता है। अतः उत्पाद का जो भाग श्रमिक व पूंजीपति के बीच बांटा जाता है, उसमें श्रमिक के हिस्से को वेतन कहा जाात है। वेतन के रूप में जो कुछ मजदूर को प्राप्त होता है, वहीं उत्पादन में इसका हिस्सा माना जाता है। प्रत्यक्षतः उत्पाद का वह हिस्सा जो मजदूर और पूंजीपति के बीच बांटा जाता है, उसके निर्धारण के लिए दोनों के बीच सौदेबाजी की जाती है। पूरी सौदेबाजी स्वतंत्र रूप से की जाती है। कभी–कभी इसमें प्रतिस्पर्धा भी शामिल हो जाती है। सौदेबाजी की शर्तों के निर्धारण में मांग और पूर्ति की स्थिति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यदि श्रमिकों की शक्ति बढ़ जाती है अर्थात मजदूरी बड़ी संख्या में और आसान शर्तों पर उपलब्ध होते हैं, तो वे कम वेतन पर ही काम करने को राजी हो जाते हैं और परिणामतः पूंजी में वृद्धि हो जाती है।

यदि पूंजी में वृद्धि की दर मजदूरी की उपलब्धता की तुलना में ज्यादा होती है तो मजदूरों की आर्थिक दशा बेहतर होना स्वाभाविक होता है। परन्तु यदि पूंजी में वृद्धि की तुलना में मजदूरों की उपलब्ध्ता में अधिक वृद्धि हो जाती है तो मजदूरों की आर्थिक दशा उतनी अच्छी नहीं रह पाती, और उन्हें मजदूरी करने के लिए जाना जरूरी हो जाता है, परिणामतः वे कम वेतन मिलने पर भी उपलब्धत जो जाते हैं। इस प्रकार कम वेतन मिलने के कारण मजदूरी गरीबी के शिकार हो जाते हैं। गरीबी के कारण मृत्यु दर में भी वृद्धि हो जाती है। यहां एक चीज समझ लेना जरूरी है कि पूंजी के बढ़ने की रफ्तार प्रायः मजदूर वर्ग की जनसंख्या वृद्धि की रफ्तार की तुलना में प्रायः कम रहती है इसलिए मजदूरी की माली हालत संतोषजनक नहीं हो पाती।

5.5.2.3 लाभ

वेतन व भाड़ा चुकाने के बाद उत्पादन का जो हिस्सा बच जाता है, उसी को वितरीत किया जाता है। कुल उत्पादन से जो लाभ होता है, उसका निश्चयन इस आधार पर किया जाता है श्रम और संसाधन द्वारा किये गये संयुक्त उत्पादन में से मलिक कितना हिस्सा लेते हैं। इस प्रकार लाभ की मात्रा इस पर निर्भर करती है कि वेतन के रूप में कितना हिस्सा खर्च हो जाता है। प्रायः यह कहा जाता है कि वेतन में वृद्धि होने से लाभ में कमी आ जाती है, और लाभ में वृद्धि होने से वेतन में कमी आ जाती है। इस प्रकार लाभ की वेतन पर निर्भरता रहती है – यदि लाभ में कमी आती है तो वेतन में वृद्धि हो जाती है, और जब वेतन में वृद्धि होती है तो लाभ में कमी आ जाती है। यह भी संभव हो सकता है कि वेतन और लाभ दोनों में एक साथ गिरावट आ जाए या एक साथ वृद्धि हो जाए।

जैसा हमने अभी–अभी समझा, श्रम और पूंजी के निवेश से जो भी उत्पादित किया जाता है उसे तीन भागों में बांटा जाता है – पहला है भाड़ा या किराया, दूसरा यह वेतन जो मजदूरों को दिया जाता है तथा तीसरा लाभ जो उत्पाद की वितरण प्रक्रिया के दौरान पूंजीपति को प्राप्त होता है।

5.5.3 विनिमय

विनिमय की व्यवस्था लोगों की जरूरतों और माँगों पर निर्भर करती है। यदि लोगों के दो समूह इतना उत्पादन कर लेते हैं कि वह उनकी जरूरतों से ज्यादा है तो वे इसका एक हिस्सा विनिमय करना चाहते हैं और बदले में वे वस्तुएं प्राप्त करना चाहते हैं जिनका उत्पादन उन्होंने नहीं किया। उदाहरण के लिए यदि एक व्यक्ति चावल पैदा करता है और दूसरा गेहूं पैदा करता है, तो अपनी सुविधा के लिए वे उन दोनों चीजों की आपस में अदला–बदली कर सकते हैं। इस प्रकार विनिमय की प्रक्रिया में दो पक्ष होते हैं – एक वह जो वस्तुओं की पूर्ति करता है, तथा दूसरा वह जो उन्हें प्राप्त करता है। इस प्रक्रिया में पूर्ति करने वाले को ग्राहक कहा जाता है और प्राप्त करने वाले को व्यापारी कहा जाता है। उत्पादित वस्तुओं को दो तरीकों से एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाया जाता है – जलमार्ग से तथा भू–मार्ग से, भूमि मार्ग से उत्पादों को यहां से वहां पहुंचाने के लिए बेलगाड़ियों तथा जमीन पर चलने वाले अन्य तरह के परिवहन साधन का इस्तेमाल किया जाता है। जबकि जल–मार्ग से जहाजों, नावों तथा जल पर चलने वाले अन्य वाहनों के माध्यम से ले जाया जाता है। वस्तुओं के यातायात में इस्तेमाल होने वाली श्रम शक्ति पर तो खर्च आता ही है, इस दौरान इन वस्तुओं के रखरखाव पर भी खर्चा होता है।

इन सबको शामिल करके बदले में प्राप्त होने वाली चीजों की मात्रा का निर्धारण का बड़ा आधार फिर भी मांग और पूर्ति की स्थिति ही है। उदाहरण के लिए यदि चावल की मांग गेहूं की तुलना में बहुत बढ़ जाती है तो चावलके बदले गेहूं उतना ही मिल पायेगा जितना चावल दिया जा रहा है। यदि चावल की मांग लम्बे समय तक बढ़ती ही चली जाती है तो विनिमय प्रक्रिया में गेहूं की मात्रा बढ़ाकर नहीं दी जाती है। यही विनिमय का नियम है, तथा राजनैतिक अर्थव्यवस्था में निवेश का यह महत्वपूर्ण पहलू है।

5.5.4 खपत

राजनैतिक अर्थव्यवस्था के चार तत्वों में से, पहले तीन तत्वों पर हमने प्रकाश डाला है। ये हैं – उत्पादन, वितरण और विनिमय। अब चौथे तथा अंतिम तत्व 'खपत' पर विचार किया जायेगा। खपत प्रक्रिया को दो रूपों में समझा जा सकता है – उत्पादात्मक खपत और अनुउत्पादात्मक खपत। उत्पादात्मक खपत से अभिप्रायः उत्पादन प्रक्रिया में शामिल संसाधनों की खपत से है – ऐसे तीन संसाधन होते है जो उत्पादात्मक खपत की प्रक्रिया में इस्तेमाल किये जाते है। पहला है वेतन श्रमिकों का वेतन – वेतन से प्राप्त धन राशि से ही मजदूर वर्ग के लोग उन चीजों की खरीदारी करते हैं जिन्हें वे पैदा करते हैं। दूसरा संसाधन है जो उत्पादात्मक खपत में इस्तेमाल होता है, वह है मशीनें तथा यातायात के साधन आदि। तीसरा संसाधन है कच्चा माल जिसे उत्पादन के लिए इस्तेमाल किया जाता है। दूसरी ओर अनुउत्पादात्मक खपत में खपत के वे सभी रूप शामिल होते हैं, जो राजस्व/धन उत्पन्न नहीं करते अथवा जिनके बदल आय प्राप्त नहीं की जा सकती। उदाहरण के लिए अनुउत्पादात्मक खपत संसाधनों द्वारा प्राप्त किए जाने वाले सभी उत्पाद उत्पादन–प्रक्रिया के दौरान ही अपना अस्तित्व खो देती हैं, इसलिए इसे अनुउत्पादात्मक खपत कहा जाता है। तथा उत्पादात्मक खपत में संसाधन अपना अस्तित्व नहीं खोते। अनुउत्पादात्मक खपत

में इस्तेमाल किये जाने वाले पदार्थों का उपभोग लोग कर लेते है, इसलिए ये खत्म हो जाते हैं। उत्पादात्मक खपत में इस्तेमाल होने वाले सभी संसाधन पूंजी के रूप में बदल जाते है जबकि अनुत्पादात्मक खपत में इस्तेमाल होने वाले संसाधन पूंजी में नहीं बदल पाते।

5.6 नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था

राजनैतिक अर्थव्यवस्था राजनीति में पूंजी की भूमिका तथा नीतिनिर्माण में पूंजी की भूमिका पर जोर देती है। जबकि नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था व्यापक रूप से स्थानीय राजनीति, जैसे कि नगरीय सरकारों के पूंजी जैसे वित्तीय व सजावट संपदा के संबंधों पर अधिक जोर देती है। यह संबंध स्थानीय स्तर से लेकर वैश्विक स्तर तक मौजूद रहते हैं। स्थानीय स्तर पर यह संबंध स्वयं नहीं बनते, यह इस बात पर निर्भर करता है कि नगर, राज्य तथा राष्ट्र किस तरह व्यवहार करते हैं, तथा राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पूंजी किस प्रकार कार्य करती है।

नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था वास्तव में एक ऐसी अवधारणा है जो नगरीय समाज शास्त्र के दो महत्वपूर्ण सवालों से जुड़ी है। एक उन घटकों से जुड़ा है जो नगरीकरण के मूल में कारण के रूप में अवस्थित हैं, तथा दूसरा इससे जुड़ा है कि शहर को कौन नियंत्रित करता है। इन दोनों सवालों की यह एक आर्थिक व्याख्या है, जो पूरी तरह स्पष्ट है और आलोचना की दृष्टि से लचीली है। इस आर्थिक व्याख्या के माध्यम से नगरीय घटनाओं की विविधता देखी जा सकती है जिससे यह सुनिश्चित हो जाता है कि नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था नगरीय समाजशास्त्र पर हावी है। नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था इस बात पर जोर देती है कि नगर के अंदर की अर्थव्यवस्था तथा राजनैतिक संरचना के विनियोजन के लिए एक शक्तिशाली और विरोधी तंत्र उत्पन्न करते हैं।

गतिविधि 2

दो व्यक्तियों को लीजिए – एक जो अर्थव्यवस्था के संगठित क्षेत्र में काम करता है तथा दूसरा वह जो गैर–संगठित क्षेत्र में काम करता है। उनके पूछिए कि उन नगरों के कोरोना काल में लॉकडाउन के दौरान उन्हें किन–किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, जिनमें वे काम करते थे। इस जानकारी के आधार पर एक पृष्ठ का आलेख तैयार कीजिए जो स्थितियों के विश्लेषणात्मक प्रभाव को दर्शाता हो। अपने अध्ययन केंद्र पर अपने अन्य साथियों के साथ इस पर चर्चा कीजिए।

नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था नगरीय पारिस्थितिकी का एक विश्लेषण होती है। इसके अंतर्गत नगरों के विकास तथा अन्य अनेक पहलुओं के साथ–साथ नगरों में क्षेत्र की उपलब्धता के साथ–साथ लोगों के बीच संसाधनों को लेकर मौजूद प्रतिस्पर्धा, राजनैतिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में जुटे लोगों तथा उन नियमों को अपने आप में जुटे समाहित करके चलती है जो नगर के व्यापक संचालन बल का काम करते हैं। परिणाम यह होता है कि नगरीय सरकारों, व्यापारिक जगत से जुड़े अभिजात वर्ग के लोगों, नगरों के नीति निर्माताओं तथा अन्य संस्थानों को वास्तविक नगरीय संरचनाओं के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा पाता। इन संरचनाओं के बीच सदैव टकराव की स्थिति बनी रहती है, क्योंकि वे सत्ता के आधिपत्य को स्वीकार नहीं करते। इसके परिणामस्वरूप नगरीय राजनैतिक अर्थशास्त्रियों ने सामाजिक शक्ति तथा आर्थिक संरचनाओं की भूमिकाओं को उजागर करते हुए नगरीय संबंधों पर जोर देना और उनकी व्याख्या करना शुरू कर दिया है। नगरीय राजनैतिक–आर्थिक संबंधों को समझने के लिए दो विचारधाराओं का उल्लेख किया गया है –

5.6.1 नव मार्क्सवादी विचारधारा

नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था नगरीय व्यवस्था के बारे में कार्ल मार्क्स की सैद्धांतिक विरासत का पुनरावलोकन करती है। यह उन क्षेत्रों में से एक है जिस पर कार्ल मार्क्स ने अपने लेखों में विस्तार से वर्णन नहीं किया था। नव मार्क्सवादियों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि नगरों के विकास क्रम को उत्पादन के ऐतिहासिक संबंधों में तलाशा जा सकता है। वर्गीय स्वार्थों को बढ़ावा देने के लिए नगरीय क्षेत्रों में औद्योगिक क्षेत्र के पूंजीपतियों ने कठोर अवसंरचना को नकारा और नगरीय क्षेत्रों की सीमाएं बनाने तथा नगर के बाहरी क्षेत्रों में उपनगर बसाने में सहयोग दिया। उन्होंने अपने राजनैतिक तथा सांस्कृतिक हितों को भी नीतियों के माध्यम से बढ़ावा दिया जिससे वे उप नगरीय क्षेत्रों में आवास निर्माण का स्वामित्व सम्हालें और भारी मुनाफा कमाए। उन्होंने नव–मार्क्सवादी यह दावा करते हैं कि उन्होंने 1970 तथा 1980 के दशकों में बौद्धिक विचारों के माध्यम से नगरीय क्षेत्रों में सामाजिक संबंधों पर न केवल जोर दिया अपितु सामाजिक संबंधों के निर्माण में विशेष रूप से सहयोग भी दिया।

5.6.2 नव वेबरवादियों की विचारधारा

जब नव–मार्क्सवादी पूंजीपतियों के संरचनात्मक पहलुओं को महत्व दे रहे थे, जो नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था के केंद्र में स्थित हो चुके थे, वेबर के अनुयाइयों ने नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था की अवधारणात्मक स्पष्टता प्रस्तुत की जिसने सामाजिक शक्ति को समझने के लिए आधार का काम किया। असल में मार्क्स ने उत्पादन के भौतिक संबंधों की राजनैतिक स्वायत्तता पर ध्यान नहीं दिया था। इसका परिणाम यह हुआ कि संरचनावादी मार्क्सवादी नगरीय राजनैतिक ताकत को ठीक से समझ नहीं पाये। उनका ध्यान केवल अर्थव्यवस्था की संरचनाओं तथा उनसे संबंधित ऐतिहासिक कल्पनाओं पर था। इसलिए 1950 तथा 1960 के दशकों में राजनैतिक विज्ञान के क्षेत्र को लेकर यह सवाल उठा था – नगर का नियंत्रण कौन करता है? इस सवाल को एक बार फिर उठा गया। आरंभ में इस समस्या पर हुई बहसों के दौरान फलॉयड हंटर (1963) तथा उन लोगों ने जो अभिजातवादी दृष्टिकोण की वकालत करते थे, यह तर्क दिया था कि नगरों के अभिजात लोगों के निजी संस्थानों अपने तथा कथित स्वार्थों की पूर्ति के लिए लगातार प्रयास किए और वे सफल हुए। यद्यपि रोबर्ट डाहल (1961) फ्लॉयड हंटर तथा अन्य लोगों के दावों से सहमत नहीं थे। उनका मानना था कि निजी उद्यम समूह लगातार सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। वे नगरीय क्षेत्रों की राजनीति पर हमेशा अपना दबदबा बनाये नहीं रख सकते। इस तरह की बहसें 1970 के दशक तक यूंही चलती रहीं, इस दौरान नगरीय राजनैतिक अर्थशास्त्रियों ने यह खुलासा किया कि नगर किस प्रकार पूंजीपतियों के लिए धन पैदा करते हैं।

परिणामस्वरूप नगरीय राजनैतिक अर्थशास्त्रियों ने नगरीय क्षेत्र के सामाजिक उत्पादन की पहचान करने के लिए नव–वेबरवादियों की विचारधारा को स्वीकार किया जिसमें यह बताया गया है कि वे सामाजिक ताकतें निहित स्वार्थों पर नियंत्रण रखने तथा नगरीय अभिजातों को अपने राजनैतिक प्रभुत्व बनाये रखने के लिए उकसाने का काम करती है।

इससे यह साबित हो जाता है कि नगरों क्षेत्रों पर शासन करना केवल नगरीय सरकारों का दायित्व नहीं हैं, बल्कि नगरीय क्षेत्रों पर शासन करने में निजी उद्यमों से जुड़े अभिजात वर्ग के लोगों का भी खासा दखल रहता है। हार्री गोलोच (1976) द्वारा प्रस्तावित 'अर्बन मशीन ग्रोथ' का सिद्धांत उन तरीकों की बात नहीं उठाता जिनके माध्यम से नगरीय अभिजात वर्ग राजनीति में अपनी भूमिका निभाते हैं, वह उनके बीच

मौजूद सहयोग की स्थितियों की बात भी नहीं करता और वे नगरीय क्षेत्र के विकास के प्रयासों में सफल होते हुए किस प्रकार राजनैतिक वर्चस्व स्थापित कर लेते हैं, इसकी बात भी नहीं करता। 1980 के बाद नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था नगरीय शासन सिद्धांत से अत्यधिक प्रभावित हुई (स्टोन, 1989)। नगरीय शासन में अनेक विविधताएं हैं तथा हर नगरीय शासन का अपनी स्वयं की कार्य–योजनाएं होती हैं जिनको केंद्र में रखकर इसके सदस्य काम करते हैं। कुछ नगरीय शासन अत्यधिक प्रगतिशील होते हैं, तथा कुछ मौजूदा राजनैतिक स्थितियों के हिसाब से अपना अस्तित्व बनाये रखते हैं (स्टोन, 1989)। लेकिन इस सब में राजनैतिक शासनों के केंद्र में विकास का मुद्दा प्रमुख रूप से मौजूद रहता है जिसे अग्रगामी राजनैतिक अभिजात वर्ग बढ़ावा देता है। विकास व्यवस्था में शामिल लोगों के राजनैतिक व व्यावसायिक स्वार्थ होते हैं जिनके कारण यह आपसी सहयोग की भावना बनाये रखते हैं और छोटे मोटे मनमुटावों को निबटाते हुए सुरक्षित चलने के प्रयास में सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्रों के बीच तालमेल बनाये रखने के प्रयास करते रहते हैं।

बोध प्रश्न 2

1) नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) राजनैतिक अर्थव्यवस्था के चार महत्वपूर्ण तत्व होते है, उनके नाम बताइए।

(1) ..... (3) .....

(2) ..... (4) .....

.....

.....

.....

.....

.....

3) उत्पादन की प्रक्रिया में ..... और ..... शामिल हैं।

.....

.....

.....

.....

.....

4) विनिमय प्रक्रिया द्वारा चीजों की मात्रा कैसे निर्धारित की जा सकती हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

5) उत्पान, वितरण, विनिमय तथा खपत सब जीवन यापन के साधन मात्र हैं। सतय ( ) असत्य ( )

.....

.....

.....

.....

.....

5.7 सारांश

इस इकाई में हमने राजनीति और अर्थशास्त्र की सामान्य धारणाओं पर विचार किया। साथ ही हमने यह भी जाना कि इन शब्दों को अलग रूपों में कैसे समझा जाता रहा है। हमने दो आर्थिक प्रणालियों के बारे में भी समझा – बाजार व्यवस्था तथा नियंत्रण प्रणाली। हमने यह भी जाता कि एडम स्मिथ के जमाने से राजनैतिक अर्थव्यवस्था किस प्रकार समझी जाती रही है। इस प्रकार हमने राजनैतिक अर्थव्यवस्था की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को भी खंगाला। फिर हमने दो मौलिक सिद्धांतों की व्याख्या करते हुए राजनैतिक अर्थव्यवस्था पर प्रकाश डाला। हमने राजनैतिक अर्थव्यवस्था के तत्वों की भी व्याख्या की, जैसे – उत्पादन, वितरण, विनिमय तथा खपत। उनके उप–तत्वों सहित उनकी विस्तार से व्याख्या की। इकाई के बाद के भाग में राजनैतिक अर्थव्यवस्था से हटकर नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था पर भी विचार किया गया, जिसमें हमने नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था को अच्छा तरह समलने के लिए दो महत्वपूर्ण विचारधाराओं का सहयोग लिया – नव–मार्क्सवादी विचारधारा तथा नव वेबरवादी विचारधारा। इस इकाई को इस तरह तैयार किया गया है कि सामान्यतः इसके द्वारा छात्रों को राजनैतिक अर्थव्यवस्था के बारे में बताया जा सके तथा विशेष रूप से नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था से छात्रों को अवगत कराया जा सके।

5.8 संदर्भ

Dahl, R. (1961) *Who Governs?*Yale University Press, New Haven, CT.

Hunter, F. (1953) *Community Power Structure*, University of North Carolina Press, Chapel Hill, NC.

Marx, K. (1859 [1993]).A Contribution to the Critique of Political Economy. Moscow: Progress Publishers.

Molotch, H. (1976). The city as a growth machine: Toward a political economy of place.

American Journal of Sociology 82, 309-332.

Molotch, H. (1993). The political economy of growth machines. Journal of Urban Affairs 15, 29-53.

Smith, A. (1776 [1981]).An Inquiry into the Nature and Causes of the Wealth of Nations. Indianapolis: Liberty Classics.

Stone, C. (1989) *Regime Politics*, University of Kansas Press, Lawrence, KS.

Weingast, B.R., Shepsle, K.A. and Johnsen, C. (1981). The political economy of benefits and costs: A neoclassical approach to distributive politics. *Journal of Political Economy* 89: 642–664.

Logan, J. and Molotch, H. (1987).*Urban Fortunes: The Political Economy of Place.* Berkeley: UC Press.

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) शासन करने के उपकरण को राजनीति कहा जाता है जिसका उद्देश्य समाज के उद्देश्यों को प्राप्त करना होता है। जबकि अर्थशास्त्र उन संस्थानों से संबंधित होता है जो किसी समाज में वस्तुओं के उत्पादन एवं वितरण की प्रक्रियाओं में व्यापक भूमिका निभाते हैं।

2) बाजार व्यवस्था तथा नियंत्रण प्रणाली।

3) राजनैतिक अर्थव्यवस्था, राज्य तथा अर्थशास्त्र के बीच अंतर्संबंधों की भूमिका निभाता है। सामाजिक तथा राजनैतिक घटनाओं को समझने का यह एक विशिष्ट मार्ग है।

4) आर्थिक दृष्टिकोण तथा समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण।

5) राजनीति अथवा राज्य व अर्थव्यवस्था।

बोध प्रश्न 2

1) नगरीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था का मतलब है – राजनीति में पूंजी की भूमिका। यह स्थानीय राजनीति तथा पूंजी के संबंधों को अपने केंद्र में रखकर चलता है।

2) उत्पादन, वितरण, विनिमय तथा खपत।

3) श्रम व पूंजी।

4) मांग एवं पूर्ति द्वारा।

5) असत्य।